प्राक्कथन

हिन्दी साहित्य के विद्यार्थी होने के नाते कई बार एक ही साहित्यकार के पद्य-गद्य साहित्य को पढ़ना पड़ता था और पढ़ते समय कई जिज्ञासाएं मन में घर कर जाती थीं। कभी मानस पटल पर यह प्रश्न उभर कर आता था कि क्या एक ही व्यक्ति दोनों विधाओं पर समान अधिकार से लिख सकता है या दोनों में से किसी एक का पलड़ा भारी होता है, कभी मन में यह शंका उठती थी कि क्या काव्य और कथा-साहित्य की शब्दावली में अन्तर होता है या उसके प्रस्तुतीकरण की कला में; इन शंकाओं के समाधान के लिए भाषा ही उचित आधार प्रतीत हुआ।

अज्ञेय के निबन्ध-साहित्य का अध्ययन (एम० फिल् के लघु शोध प्रबन्ध के रूप में) करते समय जहां अज्ञेय के साहित्य, व्यक्ति, समाज, संस्कृति, राजनीति, भाषा आदि सम्बन्धी विचार जानने को मिले, वहां दूसरे विद्वानों-आलोचकों का अज्ञेय-साहित्य के वर्ण्य-विषय और भाषा-शैली के बारे में भी दृष्टिकोण ज्ञात हुआ। अज्ञेय भाषा के प्रति अत्यधिक सजग, सचेत प्रतीत होते हैं और एक-एक ध्वनि, शब्द के सटीक प्रयोग के हिमायती हैं। यदि कुछ विद्वान्-आलोचक अज्ञेय की भाषा को कृत्रिम, जटिल और दुरूह कहते हैं तो कुछ अज्ञेय का भाषा पर असामान्य अधिकार मानते हैं तथा कहते हैं कि अज्ञेय एक-एक शब्द को टोहते हैं, उसे आंकते हैं और फिर उसका प्रयोग करते हैं। उपर्युक्त जिज्ञासाओं के समाधान हेतु और अज्ञेय की भाषा के वास्तविक रूप को जानने के लिए अज्ञेय की काव्यभाषा और कथाभाषा के तुलनात्मक अध्ययन को शोध-प्रबन्ध का विषय बनाया।

अज्ञेय बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उन्हें कवि, कथाकार, निबन्धकार और सम्पादक के रूप में अपूर्व ख्याति मिली। उन्होंने हिन्दी साहित्य को न केवल विषय-वस्तु की दृष्टि से समृद्ध किया बल्कि परम्परा से प्राप्त

भाषा को नया कलेवर भी प्रदान किया । अज्ञेय ने जो कुछ भी लिखा किसी विचारधारा में बंध कर नहीं लिखा, वे तो स्वतन्त्र लेखन के हिमायती थे। यद्यपि अज्ञेय साहित्य को प्रत्यक्ष रूप से लोकमंगल का माध्यम नहीं मानते थे तथापि परोक्ष रूप से उसकी रचना जनहित के लिए ही की।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध को वर्तमान रूप देने में मेरे निर्देशक डा० जयप्रकाश, रीडर (हिन्दी विभाग) पंजाब-विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ का बहुमूल्य सहयोग प्राप्त हुआ है। उन्होंने अपने व्यवस्थित जीवन से समय निकाल कर मेरी समस्याओं का समाधान किया और कुशल निर्देशन द्वारा मेरा मार्ग-दर्शन किया । उन्होंने काम न करने पर डांटा फटकारा भी । यह शोध कार्य डा० जयप्रकाश की डांट-फटकार, प्रोत्साहन और उनकी स्नेहिल सद्प्रेरणाओं के बिना शायद ही पूरा हो पाता ।

मैं डा० धर्मपाल मैनी का भी ऋणी हूं जिन्होंने समय-समय पर भाषागत गुत्थियों को सुलझा कर मेरी यथा-सम्भव सहायता की है । मैं डा० पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु', प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, गुरुनानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर का भी विशेष रूप से ऋणी हूं जिन्होंने अपने असीम ज्ञान द्वारा मेरे संकुचित दृष्टिकोण को विस्तार प्रदान करना चाहा और विषय सम्बन्धी बहुमूल्य ज्ञान दिया तथा अध्ययन के लिए एक निश्चित प्रतिमान बताया । मैं अपने विभाग के सभी गुरुजनों का भी ऋणी हूं जिन्होंने मुझे समय-समय पर सहयोग प्रदान किया।

मैं अपने धर्मपिता श्री आर० एल० गोरवानी का भी विशेष रूप से आभारी हूं जिन्होंने इस कार्य को पूरा करने के लिए मुझे बार-बार प्रोत्साहित किया ।

मैं उन सभी मित्रों, शुभचिन्तकों और परामर्शदाताओं के प्रति

आभार प्रदर्शित करता हूं जिन्होंने इस शोध-प्रबन्ध को लिखने में किंचित् भी मेरी सहायता की है। प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप में मैंने जिन पुस्तकों से सहायता ली है, मैं उन पुस्तकों के विद्वान् लेखकों का भी आभारी हूं।

मुकेश कुमार अरोड़ा

मुकेश कुमार अरोड़ा